

श्रीमद्भागवतम् स्कन्ध 10 अध्याय 80 — सुदामा द्वारका में

5 October 2026



दरिद्रता से जर्जर एक ब्राह्मण चीथड़े में बँधे चिउड़े लेकर द्वारका चला आता है, और त्रिलोकी के स्वामी अपनी पटरानी का साथ छोड़कर उसे गले लगाते हैं, उसके स्पर्श से रो पड़ते हैं और अपने हाथों से उसके चरण धोते हैं।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

श्रीमद्भागवतम् विज्ञम में पुनः स्वागत है — श्रीमद्भागवत महापुराण की पवित्र कथाओं और शिक्षाओं की हमारी भक्तिमयी यात्रा। दशम स्कन्ध का यह अस्सीवाँ अध्याय सुदामा की प्रिय कथा का आरम्भ है: कृष्ण के बाल-सखा एक निर्धन ब्राह्मण को उसकी पतिव्रता पत्नी मुट्ठी-भर माँगे हुए चिउड़े देकर प्रभु के पास भेजती है, और द्वारका में उसका ऐसा प्रेमपूर्ण स्वागत होता है कि सारा अन्तःपुर विस्मित रह जाता है।

अध्याय-परिचय

- शास्त्र: श्रीमद्भागवत महापुराण
- स्कन्ध: 10 (दशम स्कन्ध, उत्तरार्ध)
- अध्याय: 80 (अशीतितम अध्याय)

- अध्याय शीर्षक: ब्राह्मण सुदामा का द्वारका में भगवान् श्रीकृष्ण से मिलन
- मुख्य वक्ता: श्री शुकदेव गोस्वामी (राजा परीक्षित को सुनाते हुए)
- मुख्य श्रोता: राजा परीक्षित
- मुख्य स्थल: ब्राह्मण की दीन कुटिया और द्वारका में भगवान् श्रीकृष्ण का महल
- केंद्रीय विषय: सुदामा की दरिद्रता और पत्नी का आग्रह; चिउड़े की भेंट; अपने सखा का कृष्ण द्वारा प्रेमपूर्ण सत्कार; सान्दीपनि के आश्रम का स्मरण और गुरु-सेवा की महिमा
- मुख्य श्लोक-सीमा: स्कन्ध 10, अध्याय 80, श्लोक 1-45
- मूल संस्करण: गीता प्रेस श्रीमद्भागवत महापुराण (अंग्रेज़ी, दशम स्कन्ध, उत्तरार्ध)

प्रभु की लीलाएँ सुनने की परीक्षित की प्यास

राजा परीक्षित नए उत्साह से मुनि की ओर मुड़े: जिनकी शक्ति की कोई सीमा नहीं, उन मुकुन्द की लीलाएँ भी असीम ही होंगी, अतः वे और भी सुनना चाहते हैं। उन्होंने पूछा कि कामनाओं के बाणों से बार-बार बिंधा हुआ कौन-सा विवेकी पुरुष उत्तमश्लोक भगवान् की पावन कथाएँ सुनते-सुनते कभी ऊब सकता है? फिर राजा ने कहा कि हमारी इन्द्रियाँ किस दशा में अपने नाम की अधिकारी बनती हैं।

सा वाग् यया तस्य गुणान् गृणीते करौ च तत्कर्मकरौ मनश्च ।
स्मरेद् वसन्तं स्थिरजङ्गमेषु शृणोति तत्पुण्यकथाः स कर्णः ॥ ३ ॥

*sā vāg yayā tasya guṇān gṛṇīte karau ca tat-karma-karau manaś ca smared vasantaṁ sthira-
jaṅgameṣu śṛṇoti tat-puṇya-kathāḥ sa karṇaḥ*

अर्थ: वाणी वही है जो उनके गुणों का गान करे; हाथ वही हैं जो उनके कार्य में लगें; मन वही है जो चर-अचर सब प्राणियों में बसे हुए उनका स्मरण करे; और कान वही है जो उनकी पुण्यमयी कथाएँ सुने। (स्कन्ध 10, अध्याय 80, श्लोक 3)

राजा ने आगे कहा कि सिर वही है जो समस्त प्राणियों को प्रभु का रूप मानकर झुके, नेत्र वही है जो सर्वत्र उन्हीं को देखे, और अंग वही हैं जिन पर प्रतिदिन प्रभु और उनके भक्तों का चरणामृत छिड़का जाए। सूतजी नैमिषारण्य के ऋषियों को बताते हैं कि तब वासुदेव में पूर्णतः डूबे हृदय वाले शुकदेवजी उत्तर देने लगे।

कृष्ण के ब्राह्मण सखा

शुकदेवजी बोले, कृष्ण का एक प्रिय सखा ब्राह्मण था: ब्रह्मवेत्ता, विषयों से विरक्त, शान्तचित्त और जितेन्द्रिय। गृहस्थ होते हुए भी वह बिना माँगे जो मिल जाए उसी में सन्तुष्ट रहता था। उसके वस्त्र फटे-पुराने थे और उसकी पत्नी भी वैसे ही वस्त्रों में, भूख से दुर्बल हो चली थी। एक दिन वह पतिव्रता मुरझाए मुख और काँपते शरीर से अपने पति के पास आई और बड़ी कोमलता से बोली।

पत्नी का कोमल आग्रह

उसने कहा, “हे महाभाग, स्वयं लक्ष्मीपति भगवान्, ब्राह्मणों के रक्षक, सबके शरणदाता, सात्वतश्रेष्ठ श्रीकृष्ण आपके मित्र हैं। साधुओं के परम आश्रय उनके पास जाइए; आप-जैसे सीदते कुटुम्बी को देखकर वे अवश्य प्रचुर धन देंगे।”

आस्तेऽधुना द्वावत्यां भोजवृष्ण्यन्धकेश्वरः ।

स्मरतः पादकमलमात्मानमपि यच्छति ।

किं न्वर्थकामान् भजतो नात्यभीष्टाञ्जगद्गुरुः ॥ ११ ॥

āste 'dhunā dvāravatyāṁ bhoja-vṛṣṇy-andhakeśvaraḥ smarataḥ pāda-kamalam ātmānam api yacchati kiṁ nv artha-kāmān bhajato nāty-abhīṣṭāñ jagad-guruḥ

अर्थ: वे इस समय भोज, वृष्णि और अन्धकों के स्वामी बनकर द्वारका में विराजमान हैं। जो केवल उनके चरणकमलों का स्मरण करता है उसे वे अपना आप तक दे देते हैं; तब जो उनका भजन करता है उसे वे जगद्गुरु धन और भोग — जो वस्तुतः इतने वांछनीय भी नहीं — क्यों न देंगे? (स्कन्ध 10, अध्याय 80, श्लोक 11)



सूनी कुटिया में भूख से दुर्बल पतिव्रता पत्नी ब्राह्मण से कोमलता से आग्रह करती है कि वे कृष्ण के पास जाएँ — जो चरणकमलों का स्मरण करने वाले को अपना आप तक दे देते हैं (श्लोक 11)।

चार मुट्ठी चिउड़ा

पत्नी के बार-बार अनुरोध पर ब्राह्मण अन्ततः मान गया, किन्तु धन के लोभ से नहीं। उसने मन में सोचा — “उत्तमश्लोक भगवान् का दर्शन ही तो परम लाभ है।” जाने का निश्चय कर उसने पत्नी से धीरे से पूछा कि क्या घर में कोई ऐसी वस्तु है जिसे भेंट के रूप में ले जाया जा सके।

याचित्वा चतुरो मुष्टीन् विप्रान् पृथुकतण्डुलान् ।

चैलखण्डेन तान् बद्ध्वा भर्त्रे प्रादादुपायनम् ॥ १४ ॥

yācitvā caturo muṣṭīn viprān pṛthuka-taṇḍulān caila-khaṇḍena tān baddhvā bhartre prādād upāyanam

अर्थ: ब्राह्मणों से चार मुष्टी चिउड़ा माँगकर उसने उसे कपड़े के एक टुकड़े में बाँधा और प्रभु के लिए भेंट-रूप में अपने पति को दे दिया। (स्कन्ध 10, अध्याय 80, श्लोक 14)

उस छोटी-सी पोटली को लेकर विप्रश्रेष्ठ द्वारका की ओर चल पड़ा, और मार्ग-भर उसके साथ एक ही चिन्तन चलता रहा — कृष्ण के दर्शन मुझे कैसे प्राप्त होंगे?



कपड़े के टुकड़े में बँधे चार मुष्टी चिउड़े लेकर ब्राह्मण द्वारका की ओर चल पड़ता है, मन में केवल यही सोचता हुआ कि कृष्ण के दर्शन कैसे मिलेंगे (श्लोक 14)।

स्वर्णमयी नगरी में प्रवेश

द्वारका पहुँचकर वह अन्य ब्राह्मणों के साथ तीन सैनिक-चौकियाँ और तीन परकोटे पार करता हुआ अन्धक-वृष्णियों के उन भवनों तक पहुँचा, जहाँ अच्युत के धर्म का पालन करने वाले यदुवंशी रहते थे और साधारण जन का प्रवेश सम्भव न था। वहीं कृष्ण का महल था जिसमें सोलह हज़ार रानियों के भवन थे; उनमें से एक सजे-सँवरे भवन में ब्राह्मण ऐसे प्रविष्ट हुआ मानो ब्रह्मानन्द में डूब गया हो।

सखा को गले लगाने उठ खड़े हुए प्रभु

कृष्ण उस समय अपनी प्रिया रुक्मिणी के साथ पलंग पर बैठे थे। ब्राह्मण को दूर से ही आते देख अच्युत सहसा उठे, स्वयं आगे बढ़े और आनन्द से उसे अपनी दोनों भुजाओं में भर लिया।

तं विलोक्याच्युतो दूरात् प्रियापर्यङ्कमास्थितः ।
सहसोत्थाय चाभ्येत्य दोर्भ्यां पर्यग्रहीन्मुदा ॥ १८ ॥

*taṁ vilokyācyuto dūrāt priyā-paryāṅkam āsthitaḥ sahasotthāya cābhyetya dorbhyaṁ
paryagrahīn mudā*

अर्थ: अपनी प्रिया के पलंग पर बैठे हुए अच्युत उसे दूर से देखते ही तुरन्त उठ खड़े हुए, सामने जाकर प्रसन्नतापूर्वक दोनों भुजाओं से उसका आलिंगन किया। (स्कन्ध 10, अध्याय 80, श्लोक 18)

आनन्दस्वरूप कमलनयन प्रभु अपने प्रिय सखा, उस विप्रर्षि, के अंग-स्पर्श से इतने विह्वल हुए कि उनके नेत्रों से अश्रु झरने लगे।

चीथड़ों में आए अतिथि की पूजा

फिर लोकपावन प्रभु ने सखा को अपने ही पलंग पर बैठाया और स्वयं अपने हाथों पूजा की सामग्री ले आए। उन्होंने ब्राह्मण के पैर पखारे और वह जल अपने सिर पर धारण किया; दिव्य गन्ध, चन्दन, अगुरु और केसर का लेप किया; सुगन्धित धूप और दीपों की पंक्तियों से उसकी अर्चना की; ताम्बूल और गौ भेंट की तथा मधुर वचनों से स्वागत किया। और देवी रुक्मिणी स्वयं इस दुर्बल, फटेहाल अतिथि पर चँवर डुलाने लगीं।

कुचैलं मलिनं क्षामं द्विजं धमनिसन्ततम् ।
देवी पर्यचरत् साक्षाच्चामरव्यजनेन वै ॥ २३ ॥

*ku-cailaṁ malinaṁ kṣāmaṁ dvijaṁ dhamani-santatam devī paryacarat sāṅśāc cāmara-
vyajanena vai*

अर्थ: मैले-कुचैले वस्त्रों वाले, कृश और जिसके शरीर पर नसें उभरी हुई थीं, उस द्विज की सेवा साक्षात् देवी रुक्मिणी ने चामर-व्यजन से की। (स्कन्ध 10, अध्याय 80, श्लोक 23)



सखा को अपने ही पलंग पर बैठाकर कृष्ण अपने हाथों उसके चरण पखारते हैं, और रुक्मिणी स्वयं उस फटेहाल अतिथि पर चामर डुलाती हैं (श्लोक 23)।

अन्तःपुर की स्त्रियों का विस्मय

निर्मल कीर्ति वाले कृष्ण को इस अवधूत भिक्षुक का ऐसा प्रेमपूर्ण सम्मान करते देख अन्तःपुर की स्त्रियाँ चकित रह गईं। वे आपस में कहने लगीं — “लोक में निन्दित और नीच समझे जाने वाले इस निर्धन भिक्षुक ने ऐसा कौन-सा पुण्य किया है कि त्रिलोकगुरु श्रीनिवास ने पलंग पर बैठी लक्ष्मी को छोड़कर इसे अपने बड़े भाई की भाँति हृदय से लगा लिया?” इधर दोनों सखा एक-दूसरे का हाथ थामे गुरुकुल के उन मधुर दिनों की बातें करने लगे जो उन्होंने कभी साथ बिताए थे।

कृष्ण सखा से पूछते हैं — स्मरण है?

प्रभु ने पहले पूछा कि गुरु को दक्षिणा देकर गुरुकुल से लौटने पर क्या सखा ने अपने अनुरूप पत्नी से विवाह किया। उन्होंने कहा, “मैं जानता हूँ कि तुम्हारा चित्त गृहस्थी में आसक्त नहीं और धन में भी तुम्हारी विशेष रुचि नहीं। माया से उत्पन्न कामनाओं को त्यागकर भी जो निष्काम भाव से अपने कर्तव्य करते रहते हैं, जैसे मैं लोकसंग्रह के लिए करता हूँ, ऐसे लोग संसार में विरले ही हैं।” फिर उन्होंने पूछा कि क्या ब्राह्मण को गुरुकुल-वास स्मरण है, जहाँ द्विज जानने योग्य तत्त्व को जानकर अज्ञान के अन्धकार से पार हो जाता है।

उन्होंने मनुष्य के जीवन के तीन गुरुओं की बात कही: शरीर देने वाला पिता पहला गुरु है; यज्ञोपवीत देकर कर्तव्य सिखाने वाला आचार्य स्वयं कृष्ण के समान पूज्य है; और आत्मज्ञान देने वाला गुरु तो साक्षात् कृष्ण ही है। जो केवल गुरु के वचन से भवसागर को सहज ही पार कर लेते हैं, वही अपने सच्चे हित को जानने वाले हैं। और इन वचनों के शिखर पर उन्होंने वह घोषणा की जो इस अध्याय का हृदय है।

नाहमिज्याप्रजातिभ्यां तपसोपशमेन वा ।

तुष्येयं सर्वभूतात्मा गुरुशुश्रूषया यथा ॥ ३४ ॥

nāham ijjā-prajātibhyāṁ tapasopāśameṇa vā tuṣyeyāṁ sarva-bhūtātmā guru-śuśrūṣayā yathā

अर्थ: सर्वभूतों का आत्मा मैं यज्ञ से, उपनयन-रूप द्वितीय जन्म से, तपस्या से या उपशम से उतना सन्तुष्ट नहीं होता जितना गुरु की श्रद्धापूर्ण सेवा से होता हूँ। (स्कन्ध 10, अध्याय 80, श्लोक 34)

आँधी-पानी की वह रात

कृष्ण बोले, “क्या तुम्हें वह दिन याद है जब गुरुपत्नी ने हमें ईंधन लाने भेजा था? हम घने वन में घुसे ही थे कि बेमौसम भयंकर आँधी और वर्षा टूट पड़ी और बादल निर्दय होकर गरजने लगे। सूर्य डूब गया, अन्धकार ने दिशाएँ ढँक लीं, और चारों ओर जल ही जल होने से ऊँची-नीची भूमि का पता न चलता था। आँधी और जल-प्रवाह से बार-बार पीटे जाते, दिशा-भ्रमित और व्याकुल हम एक-दूसरे का हाथ थामे वन में भटकते रहे। सूर्योदय होने पर हमारे गुरु सान्दीपनि यह जानकर हमें ढूँढ़ते हुए आए और हम शिष्यों को उस दुर्दशा में पाया।”



कृष्ण सान्दीपनि आश्रम की उस रात को याद करते हैं जब ईंधन लाने भेजे गए दोनों बालक भयंकर आँधी-पानी में फँसकर हाथ थामे अँधेरे वन में भटकते रहे, और सूर्योदय पर गुरु ने उन्हें ढूँढ़ निकाला।

सान्दीपनि का आशीर्वाद

“उन्होंने कहा, ‘अहो मेरे पुत्रो, तुमने मेरे लिए कितना कष्ट उठाया! हर प्राणी को अपना शरीर ही सबसे प्रिय होता है, पर तुमने मेरी भक्ति में उसकी भी परवाह न की। सच्चे शिष्य का यही कर्तव्य है, जिससे वह गुरु का ऋण चुकाता है।’”

एतदेव हि सच्छिष्यैः कर्तव्यं गुरुनिष्कृतम् ।

यद् वै विशुद्धभावेन सर्वार्थात्मार्पणं गुरौ ॥ ४१ ॥

etad eva hi sac-chiṣyaiḥ kartavyaṁ guru-niṣkṛtam yad vai viśuddha-bhāvena sarvārthātmārpaṇaṁ gurau

अर्थ: गुरु-ऋण से उऋण होने के लिए सत्शिष्यों का यही कर्तव्य है कि वे विशुद्ध भाव से अपना सर्वस्व और अपना आप भी गुरु को अर्पित कर दें। (स्कन्ध 10, अध्याय 80, श्लोक 41)

“उन्होंने आशीर्वाद दिया — ‘द्विजश्रेष्ठो, मैं तुम पर प्रसन्न हूँ। तुम्हारे सब मनोरथ सत्य हों, और मुझसे पढ़ी हुई वेदविद्या इस लोक और परलोक में कभी निष्फल न हो।’” कृष्ण ने कहा कि गुरुगृह में रहते हुए ऐसी अनेक घटनाएँ घटीं; गुरु की कृपा से ही मनुष्य पूर्ण होकर परम शान्ति पाता है।

ब्राह्मण का उत्तर

ब्राह्मण ने उत्तर दिया, “हे देवदेव, हे जगद्गुरु, हमारे लिए पाने को क्या शेष रहा, जब सत्यसंकल्प आपके साथ गुरुगृह में रहने का सौभाग्य हमें मिला? हे विभो, आपका श्रीविग्रह तो स्वयं वेद है, समस्त कल्याणों का उद्गम। उन्हीं वेदों को पढ़ने के लिए आपका गुरुगृह में रहना मनुष्य-लीला का विलक्षण अनुकरण-भर है।”

यस्यच्छन्दोमयं ब्रह्म देह आवपनं विभो ।

श्रेयसां तस्य गुरुषु वासोऽत्यन्तविडम्बनम् ॥ ४५ ॥

yasya cchando-mayaṁ brahma deha āvapanam vibho śreyasām tasya guruṣu vāso 'tyanta-viḍambanam

अर्थ: हे विभो, जिनका देह स्वयं वेदमय ब्रह्म है और समस्त श्रेय का क्षेत्र है, उनका गुरुओं के घर निवास करना तो महान् विडम्बना — अर्थात् लीलामात्र — ही है। (स्कन्ध 10, अध्याय 80, श्लोक 45)

इस अध्याय की प्रमुख शिक्षाएँ

1. प्रत्येक इन्द्रिय की सार्थकता प्रभु में है। परीक्षित के वचन (श्लोक 3) वाणी, हाथ, मन और कान को इस कसौटी पर कसते हैं कि वे कृष्ण का गान, सेवा, स्मरण और श्रवण करते हैं या नहीं। भक्ति ही हर अंग का स्वाभाविक उपयोग है।
2. प्रभु का दर्शन ही परम लाभ है। ब्राह्मण धन के लिए नहीं, दर्शन को सर्वोच्च प्राप्ति मानकर द्वारका जाता है। पत्नी के वचन (श्लोक 11) भी यह दिखाते हैं कि प्रभु का अपना आप देना धन से कहीं ऊँचा दान है, जिसके आगे धन तो सहज ही मिल जाता है।
3. प्रभु को प्रेम प्रिय है, पद नहीं। कृष्ण लक्ष्मी का साथ छोड़कर एक फटेहाल भिक्षुक को गले लगाते हैं (श्लोक 18) और उसके पैर धोते हैं। अन्तःपुर की स्त्रियों का विस्मय हमें बताता है कि प्रभु केवल हृदय की भक्ति से जीते जाते हैं।
4. गुरु-सेवा प्रभु को सबसे अधिक प्रसन्न करती है। कृष्ण की घोषणा (श्लोक 34) और सान्दीपनि के आत्मार्पण के वचन (श्लोक 41) इस अध्याय का सैद्धान्तिक मर्म हैं: यज्ञ, उपनयन, तप या उपशम से बढ़कर गुरु की विनम्र सेवा सर्वभूतात्मा को प्रसन्न करती है।
5. प्रभु की मानव-लीला उदाहरण से सिखाती है। वेद जिनका शरीर हैं, वे कृष्ण भी गुरुगृह में पढ़े (श्लोक 45), और निष्काम भाव से कर्तव्य करते हैं ताकि संसार उनका अनुसरण करना सीखे।

एक भाक्तेमय चिन्तन

प्रभु यह मिलन रचते ही क्यों हैं, जब वे सखा की आवश्यकता जानते हैं और दूर से ही उसका घर धन से भर सकते हैं? कृष्ण चाहते थे कि सारा संसार देखे कि वे भेंट से नहीं, प्रेम से बँधते हैं। ब्राह्मण की पोटली का मूल्य नगण्य है; उसका हृदय, जो केवल कृष्ण-दर्शन चाहता है, अमूल्य है। रुक्मिणी का साथ छोड़कर उठना, अश्रु बहाना और एक भिक्षुक के पैर पखारना — इन कर्मों से श्रीपति संसार के सारे तराजू सबके सामने उलट देते हैं। और बातचीत को सान्दीपनि की ओर मोड़कर वे छिपा हुआ सूत्र खोल देते हैं: अँधेरे तूफानी वन में दो बालकों ने अपने गुरु के प्रति जो आत्मविस्मृत भक्ति दिखाई थी, वही आज उन्हें सबसे प्रिय है। हम, जो अपनी छोटी-सी पोटलियाँ लेकर उनके पास आते हैं, आश्चस्त रहें। वे यह नहीं तौलते कि हम क्या लाए; वे यह देखते हैं कि उनसे प्रेम करते-करते हम क्या बन गए।

एक दैनिक भक्ति-अभ्यास

आज कृतज्ञता से उस एक गुरु का स्मरण करें जिनके द्वारा पवित्र ज्ञान आप तक पहुँचा — माता-पिता, दीक्षागुरु या कोई सन्त मार्गदर्शक — और उन्हें मौन प्रार्थना, धन्यवाद का एक शब्द या सेवा का कोई छोटा-सा कार्य अर्पित करें, यह स्मरण रखते हुए कि ऐसी सेवा कृष्ण को किसी भी अनुष्ठान से अधिक प्रिय है। फिर भागवत का कोई अंश पढ़ें या सुनें, ताकि आज आपके कान सच्चे कान बनें। आरम्भ में धीरे-धीरे जपें: ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

उपसंहार

यहाँ शुकदेवजी सुदामा की कथा आरम्भ करते हैं। एक निर्धन ब्राह्मण दीन की भेंट लेकर द्वारका पहुँचता है, और समस्त ऐश्वर्य के स्वामी उसे परम प्रिय अतिथि की भाँति अपनाते हैं; फिर स्मृतियों में उसे सान्दीपनि के आश्रम और वन की उस तूफानी रात में लौटा ले जाते हैं और उस स्मृति के शिखर पर यह शिक्षा रखते हैं कि गुरु-सेवा उन्हें सबसे अधिक प्रसन्न करती है। हम सुदामा से सीखें कि प्रभु को उनके ही लिए चाहा जाए, और उन दो किशोर शिष्यों से सीखें कि गुरु को अपने से भी प्रिय रखा जाए।

श्रीमद्भागवतम् का दिव्य ज्ञान हमारे हृदयों में शुद्ध भक्ति जगाए।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

जय श्री माधव।

संदर्भ एवं आभार

- मूल संस्करण: गीता प्रेस, श्रीमद्भागवत महापुराण (अंग्रेज़ी), दशम स्कन्ध (उत्तरार्ध), अध्याय 80।
- शृंखला: श्रीमद्भागवतम् विज़्डम • बिस्व सनातन धर्म सेवा ट्रस्ट।
- पण्डित डॉ. श्री काशीनाथ मिश्र के आध्यात्मिक मार्गदर्शन एवं अनुशंसा के अनुसार प्रस्तुत।

यह लेखक के अपने शब्दों में एक मौलिक, श्रद्धापूर्ण पुनर्कथन है, जिसमें संक्षिप्त उद्धृत श्लोक देवनागरी एवं लिप्यन्तरण सहित दिए गए हैं और उनके अर्थ सारांश रूप में प्रस्तुत हैं। यह किसी एक प्रकाशक के सतत अनुवाद या टीका का पुनरुत्पादन नहीं है। किसी प्रकाशक के संबंध या समर्थन का दावा नहीं किया गया है।

॥ हरि ॐ तत्सत् ॥

जय श्री माधव

ऑनलाइन पढ़ें: kalkiabatara.org/hi/blog-srimad-bhagavatam-canto-10-chapter-80-sudama-visits-krishna-in-dvaraka-hi.html

श्रीमद्भागवतम् विज्ञम • कल्कि अवतार इंटरनेशनल • बिस्व सनातन धर्म सेवा ट्रस्ट

